eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 03, March 2023

भारतीय संगीत का सांस्कृतिक एवं सामाजिक पक्ष

डॉ0 आम्रपाली[1]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर किशोरी रमन महिला स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, मथुरा, उ0प्र0

Received: 15 March 2023 Accepted & Reviewed: 25 March 2023, Published: 31 March 2023

Abstract

भारतीय संगीत केवल एक कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह भारत की गहरी सांस्कृतिक और सामाजिक चेतना का भी प्रतीक है। यह संगीत विविध धार्मिक परंपराओं, जातीय समुदायों, त्योहारों और जीवनशैली के माध्यम से भारतीय समाज में गहराई से रचा–बसा है। शास्त्रीय, लोक और धार्मिक संगीत की परंपराएं न केवल सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित करती हैं, बल्कि सामाजिक एकता, आध्यात्मिक चेतना और सामुदायिक जीवन में भी योगदान देती हैं। यह शोधपत्र भारतीय संगीत के विकास, उसके विविध स्वरूपों और सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभावों का विश्लेषण करता है। संगीत किस प्रकार सामाजिक आंदोलनों, धार्मिक अनुष्ठानों, जातीय पहचान, और लोक संस्कृति का माध्यम बना है, इस पर भी विचार किया गया है। इसके अतिरिक्त, आधुनिक समय में संगीत की सामाजिक भूमिका, जैसे शिक्षा, मनोरंजन, और जनजागरूकता अभियानों में उपयोग, को भी इस अध्ययन में समाहित किया गया है।

मुख्य शब्द– भारतीय संगीत, सांस्कृतिक परंपरा, सामाजिक चेतना, शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत, धार्मिक संगीत, सांप्रदायिक समरसता, सामाजिक एकता, संगीत और शिक्षा

Introduction

सांस्कृतिक पहचान"देवताः अग्निः ऋषिः मधुच्छन्दाः।
वैष्वमित्रः छन्दः गायत्री स्वरः, षड्जः।।"[1]

भारतीय सभ्यता इतिहासकारों के अनुसार लगभग 5000 वर्ष पुरानी है। उपर्युक्त श्लोक में षड्ज के उल्लेख से यह स्पष्ट है। कि वैदिक काल से ही मनुष्य को सभी स्वरों का पूर्ण ज्ञान था। अतः कहा जा सकता है, कि संगीत कला भारतीय जनमानस का एक अभिन्न अंग रही है। हर युग में काल परिवर्तन के साथ ही समाज पर संगीत के माध्यम, प्रयोग, स्वरूप एवं प्रभाव अलग–अलग रहे, जिसमें बहुत बड़ा हाथ विभिन्न कालखण्डों में व्याप्त सामजिक व्यवस्था, राजनैतिक उथल–पुथल तथा तत्कालीन प्रचलित धार्मिक एवं व्यवहारिक ढांचे का भी है। इसी विषय के परिप्रेक्ष्य में संगीत के बदलते स्वरूप पर एक संक्षिप्त मूल्यांकन प्रस्तुत है। वैदिक कालीन संगीत की सामगायन से लेकर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संगीत की सामाजिक स्थिति पर विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। संगीत सदैव ही भारतीय समाज का दर्पण रहा है। संगीत ने हर काल के समाज पर अपना प्रतिबिंब छोड़ा तथा बुद्धिजनों, विद्वानों, राजा, तथा जनसाधारण तक सभी वर्गों को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रुप से प्रभावित किया है। संगीत ने सदैव ही समाज को नई दिशा देने का प्रयास किया है, तथा भारतीय समाज को सभ्यता और संस्कृति से परिपूर्ण करके उसके इतिहास को गौरवशाली तथा ओजस्वी बनाया है।

भारतीय संगीत का उद्भव वैदिक काल से ही हो गया था। संगीत भारतीय समाज के विभिन्न क्रियाकलापों, यज्ञों तथा संस्कारों में उपयोगी था। एक ओर संगीत धार्मिक अनुष्ठानों का पर्याय था, तो

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 03, March 2023

दूसरी ओर उसी के समकक्ष एक अन्य धारा, जिसे लोक–संगीत कहा जाता है, समाज में निरंतर प्रवाहित होती रही। जिसने संगीत में बदलाव के कारण, तथा एक नई दिशा देने का प्रयास किया। लोक–संगीत सदैव ही जनसाधारण से जुड़ा हुआ था। आज भी लोक–संगीत समाज के सभी वर्गों में समान रूप से प्रचलित है। लोक–संगीत से भारतीय शास्त्रीय संगीत भी सदैव प्रभावित रहा, यह कहना अतिश्योक्ति न होगी।

लोक–संगीत चूंकि जनसामान्य की दैनिक जीवन की गतिविधियों से जुड़ा हुआ था, इसलिए अधिक प्रचलित था। आज भी कजरी, सवनी, टप्पा तथा सुगम आदि गायन शैलियां लोक–संगीत से ही प्रेरित है। ऐसा कहा जाना चाहिए कि लोक–गीत किसी भी समाज में प्रचलित वे गीत होते हैं जो कि उनके सुख–दुःख के अवसरों अथवा उनके जीवन से कई विभिन्न क्रियाकलापों के बारे में वर्णन करते हैं, अथवा गाये बजाये जाते हैं; जैसे– विवाह के गीत, सोहर, श्रृद्धांजलि गीत, आदि।

सामाजिक परिर्वतन व भारतीय संगीत–

समाज के परिवर्तित रूप का प्रभाव सदैव से ही भारतीय संस्कृति व संगीत पर पड़ता है। इस सामाजिक परिर्वतन ने हमारे रहन–सहन, भाषा, रीति–रिवाज, संस्कृति, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक पहलुओं/पक्षों में परिवर्तन किया है।

सामाजिक परिवर्तन का भारतीय संगीत पर प्रभाव–

किसी भी जनसाधारण की कला उसकी मानसिकता से निर्धारित होती है। समाज की इस परिवर्तनशीलता अथवा प्रगतिशीलता के कारण, कला भी स्थिर नहीं रह पाती है। वह निरंतर विकसित परिवर्तनशीलता के कारण व परिवर्तित होती रहती है और इसी प्रकार भारतीय संगीत कला भी सदैव परिवर्तित होती रही है।

गायन में पदों का प्रयोग राग में रंजकता तथा भाव उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। कविता अथवा साहित्य का चयन देश की सामाजिक व्यवस्था के अनुसार होता है, तथा सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ ही गायन में प्रयोग किये जाने वाले पदों में भी अन्तर आया है। संगीत विद्वान श्री जी0सी0 उप्रेती ने इन्ही संकलनों के कुछ गीतों के आधार पर सामाजिक परिवर्तन के संबंध में विष्लेशण किया है। जो इस प्रकार है।[2]

राग शंकरा के एक ध्रुवपद की बंदिश के बोल हैं–

''ब्रह्म ते के पुरुष भरू प्रकृति प्रकट भई
प्रकृति ते महान भयो अहंकार है।''

उपर्युक्त बोलों से स्पष्ट होता है कि इसका रचनाकाल बहुत पुराना होगा। उस समय श्रोता निश्चित वैदिक दृष्टिकोण से प्रभावित रहे होंगे। इसके पश्चात् तानसेन द्वारा रचित (सादरा) ध्रुवपद अंग, जिसे भातखंडे जी ने राग भैरव में लिपिबद्ध किया है। इस प्रकार है–

"विष्णु चरण, जल, ब्रह्म कमण्डल।
शिव जटा राजत देवी गंगे।।
भागिरथी सकल जगतारिणी भूमिभार उतारिनी।
मन–धन–बेलि कटाच्छन के तारन तरंगे।।''[3]

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 03, March 2023

तानसेन के इस ध्रुवपद के आरंभ में गंगा की उत्पत्ति के विषय में बताया गया है। अतः कहा जा सकता है कि किस प्रकार सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप संगीत के गीतों में भी परिवर्तन होता गया। ध्रुवपद युग के बाद ख्याल गायन का प्रारंभ हुआ। गायन के ढंग अथवा शैली में दृष्टव्य परिवर्तन भी सामाजिक सामाजिक ढाँचे परिवर्तन का परिणाम था।

ध्रुपद गायन चौताल में होता था तथा ताल की गति विलम्बित होती थी। गायन की यह विधा गंभीर धीर–गायवी थी। जीवन में गतिशीलता आने से सामाजिक परिवेश में बदलाव के कारण गतिशील ख्याल–गायन जो कि अधिकतर तीन, झप तथा एक आदि तालों में गाया जाता है, अधिक प्रचलित हो गया। इसी कारण ही भावपूर्ण गायन शैली **''ठुमरी''** का भी आविष्कार हुआ। मध्यकालीन ख्याल की अनेकों बंदिशें देखने से यह स्पष्ट होता है कि, मध्ययुग में समाज पुरुष प्रधानता की चरम सीमा पर था। इससे भारतीय समाज की पारिवारिक व्यवस्था का भी ज्ञान प्राप्त होता था।

उदाहरणार्थ राग बरवा की बंदिश तत्कालीन समाज का एक स्वरुप परिलक्षित करती प्रतीत होती हैः–

"बाजे मोरी पायलिया प्रेग
कैसे कर आऊ तोरे पास मितवा
सास ननद मोरि जनम की बैरन
चरचा करे सब घर के लोगवा।''

उपर्युक्त ख्याल के बोलों से यह स्पस्ट है कि भारत के तत्कालीन समाज में जब सम्मिलित परिवारों में लोग रहते थे, तो स्त्री एवं पुरुष का परस्पर संवाद भी सम्भव नहीं होता था। परिवार के विभिन्न संबंधों का साहित्य में अत्यधिक प्रयोग तत्कालीन बंदिशों में देखने को मिलता है। सास ननद की चर्चा, देवर–जेठ से मनुहार अथवा शिकायत, पायल की आवाज़ किसी को न सुनाई दे ऐसी चेष्टा करना आदि विषयक साहित्य की संगीत जगत में भरमार है। अतः स्पष्ट है कि संस्कृति समाज व संगीत का अटूट संबंध है। सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव संगीत के साथ–साथ लय एवं ताल पर भी दृष्टिगत होता है।

समय के साथ–साथ ध्रुपद की लय में कुछ तेज़ी आ गई, और दुगुन–तिगुन एवं आड़–कुआड़ आदि का लयकारियों का प्रयोग भी बढ़ता गया।

भातखंडे जी ने भी हिन्दुस्तानी संगीत शास्त्र में लिखा है कि–

''गायक सदैव समाज की रुचि का अनुसरण करके चलता है। वह संगीत में केवल यह देखता है कि वह संगीत कानों को प्रिय लगता है, कि नहीं। अतः गायक वही है जो मानव ह्रदय का रंजन करे। जैसे कई गायक राग में विवादी स्वर का बहुत ख़ूबसूरती से प्रयोग करके श्रोता को अधिक आनंद का अनुभव करा देते हैं। अतः ऐसा करना बुरा नहीं है।''[4]

इससे यह स्पष्ट होता है कि शास्त्रीय संगीत में कुछ परिर्वतन अवश्य करने चाहिए जिससे वह समाज का रंजन कर सके तथा भारत के समस्त पर्व, त्यौहार और सोलह संस्कारों में संगीत, भारतीय संस्कृति का अनिवार्य अंग बन गया है। जो जीवन में संगीत के महत्व को दर्शाता है। वस्तुतः यह जीवन का सूक्ष्म आहार, पानी है। इसी से जीवन का पूर्ण विकास होता है और संगीत साधक आध्यात्म के सहारे शरीर, इन्द्रिय और मन से ऊपर आत्म तत्व को प्राप्त करता है।

© www.ijarps.org 2023

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 03, March 2023

डॉ0 अमलदास शर्मा इस के संबंध में विचार करते हुये कहते हैं–

''हमारे देश में साधारण लोक शिक्षा से लेकर उच्चतम ज्ञान की वाणी संगीत के माध्यम से ही प्रचारित होती आयी है। इस देश के किसान, मजदूर, मांझी सभी संगीत की स्वर लहरों में गोते खाते रहते हैं। अतः भारतीय समाज का संपूर्ण जीवन ही संगीतमय है।''[5]

भारतीय संस्कृति के निर्माताओं ने व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास के लिए जीवन में कलाओं का महत्व स्वीकारा है। वात्सायन ने 64 कलाओं की शिक्षा प्राप्त करना जीवन में आवश्यक माना है। उन 64 में से संगीत को सर्वश्रेष्ठ स्थान पर रखा गया है।

संगीत एक कला है। कलाओं के संदर्भ में विचार करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, कहते हैं;– ''कला का कार्य व्यक्ति व समाज को परस्पर समीप लाना है। इसी कार्य के लिए समाज में भाषाओं की उत्पत्ति हुई। जिसमें से कला भी एक है। अतः निस्संदेह, विश्व भाषा के रूप में संगीत का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान दिखाई देता है। संगीत कला का मानवीय गुणों की वृद्धि में अमूल्य योगदान प्रतीत होता है।''

डॉ0 महावीर प्रसाद **'मुकेश'** के अनुसार ''जहाँ कलाओं में अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है वहाँ वे मानव मात्र की पशु भावनाओं को परिष्कृत करके उसे संस्कारित, सुशील व सभ्य भी बनाती है।''[7]

''हमारे प्रसिद्ध संगीत चिंतक पं. वासुदेव शास्त्री अपनी हिन्दू धर्म व समाज में स्वीकारे गए चार पुरुषार्थों की सिद्धि संगीत द्वारा मानते हैं। उन्होंने रस का संबंध भी संगीत के साथ के सुंदर, ढंग से स्थापित किया है।''[8] यूनानी सभ्यता में भी संगीत के महत्व को स्वीकारा गया है। इसके महत्व का वर्णन करते हुऐ भ्ंतइंतज । च्वचसमल के अनुसार;

"The ancient greekes are said to have a point of teaching their children music, because they beleive that it made them more unselfish and helf them to see more better the beauty of order and the usefulness of rules".[9]

निष्कर्ष– वर्तमान भारतीय संगीत हमारी प्राचीन भारत की सुहद सांगीतिक धरोहर का ही विकसित रूप है। भारतीय संगीत आज के समय में न केवल जीवन के विशिष्ट क्रियाकलापों में व्याप्त है, अपितु अत्यधिक प्रचार–प्रसार एवं सोशल मीडिया के आ जाने से जनसामान्य की प्रत्येक गतिविधि का हिस्सा बन गया है। अन्त में मैं पं. भातखण्डे् द्वारा कहे गए एक वक्तव्य से इस लेख को विराम देना चाहूँगी। समाज की रूचि को उत्तम दिशा में मोड़ने का उत्तरदायित्व संगीत व्यवसायी लोगों पर ही होता है, परन्तु उस उत्तम दिशा को पहचानने के लिए किसी प्रकार का सुसंस्कार होना भी आवश्यक है।

संदर्भ गृन्थ सूची–

1. ऋवेद, अध्याय–1, सूक्त पहला, मंत्र–1

2. जी०सी० उप्रेती, भारतीय संगीत (बदलता परिदृश्य) राहुल पब्लिशिंग हाउस, पृ०–1

3. पं० विष्णु नारायण भातखण्ड़, क्रमिक पुस्तक मालिका, दूसरी पुस्तक, संगीत कार्यालय, हाथरस, द्वितीय आवृति, पृ०–211

4. पं० विष्णु नारायण भातखण्ड़े, भारतीय संगीत शास्त्र–भाग–1, संगीत कार्यालय, हाथरस, पृ०–153

5. डॉ० अमलदास शर्मा, MUSICIANS OF INDIA, Post and Present, Pilgrims Publishing, Ist. edition Page No–32

6. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, श्रेष्ठ निबंध, लोकभारती प्रकाशन द्वितीय संस्करण 2012, पृ०–122

© www.ijarps.org 2023

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 03, March 2023

7. के० वासुदेव शास्त्री, संगीत शास्त्र, हिन्दी समिति, लखनऊ, पृ०—3
8. महावीर प्रसाद मुकेश, संगीत सदन प्रकाशन इलाहाबाद, पंचम संस्करण, 2012
9. Harbart A Popley, The music of India, Forgotten Books 2018, Page No-7